RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-02
Issue-08
August-2017

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com

भारत में शासन और लोक सेवा प्रदायगी: सार्वजनिक वितरण प्रणाली एवं मनरेगा

[1]डॉ. अभय प्रसाद सिंह; [2]डॉ. कृष्ण मुरारी

[1]असिस्टेंट प्रोफेसर, पी.जी.डी.ए.वी. कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय।
[2]असिस्टेंट प्रोफेसर, शहीद भगत सिंह कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय।

लोकतांत्रिक राज्य की शासकीय वैधता अपने नागरिकों को सार्वजनिक सेवा प्रदायगी के बेहतर शासन और प्रावधानों के माध्यम से प्राप्त होती है। सार्वजनिक सेवाओं की कुशल प्रदायगी लोगों को बेहतर स्वास्थ्य, शिक्षा, रोजगार एवं आजीविका की गारंटी देता है। अर्थव्यवस्था के सतत विकास के लिए गुणवत्तापूर्ण मानव संसाधन विकास एक अनिवार्य शर्त है। सिद्धांततः, समानता, सार्वभौमिकता और जवाबदेही ही सार्वजनिक सेवाओं के आधार हैं। आवश्यक सार्वजनिक सेवाओं का हस्तांतरण निजी क्षेत्रों को नहीं किया जा सकता है। आजादी के उपरांत सार्वजनिक सेवा प्रदायगी में कई नीतियों, परियोजनाओं, कार्यक्रमों और मिशन के द्वारा शासकीय दक्षता भी हासिल हुई है। शासन संरचनाओं और प्रक्रियाओं में बदलाव से लोगों तक सेवा प्रदायगी की पहुंच भी बढ़ी है। हालांकि ऐसी कई चुनौतियाँ हैं जो अभी भी सेवा प्रदायगी की प्रक्रिया पर नकारात्मक प्रभाव डालती हैं जैसे जवाबदेही की कमी, नागरिक सतर्कता में कमी, सार्वजनिक सेवाओं के निर्बाध पहुंच में बाधा एवं सेवाओं की गुणवत्ता से समझौता।

कम आय वाले लोकतांत्रिक देशों में नागरिक बुनियादी सेवाएं जैसे की शिक्षा, स्वास्थ्य, बैंकिंग, और आजीविका के लिए राज्य पर निर्भर हैं। ऐसी परिस्थितिओं में राज्य की भूमिका सार्वजनिक सेवाओं के शासन और लोक सेवा प्रदायगी के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है। निम्न आय वाले लोकतांत्रिक देशों में सार्वजनिक प्रावधान में नि:शुल्क या रियायती सेवाओं का मूल उद्देश्य बेसहारा और असुरक्षित लोगों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करना और गरीबी को कम करना है। विकासशील देशों में रियायती भोजन की सार्वजनिक आपूर्ति गरीब लोगों को अल्पपोषण, और अल्परोजगार के दुष्चक्र से दूर करने में राज्य की सार्वजनिक सेवा प्रदायगी की भूमिका सहायक साबित होती है(दासगुप्ता और राय, 1986, 1013)| मुख्यतः सार्वजनिक सेवा प्रावधान का उद्देश्य संसाधनों के अन्यायपूर्ण वितरण को कम करना और ऐतिहासिक असमानताओं जैसे कि जाति आधारित भेदभाव और लिंग असमानता को दूर करना है। आर्थिक असमानताओं को कम करने में सार्वजनिक सेवाएं सक्षम हैं जो पिछले कुछ दशकों में भारत और चीन जैसी अर्थव्यवस्थाओं में देखा जा सकता है (डीटन और ड्रेज़, 2002, 3739-3741)। गुणवत्तापूर्ण सार्वजनिक सेवाओं को प्रभावी और समयबद्ध तरीके से सुनिश्चित करने से असमानता को कम किया जा सकता है।

1980 के दशक से कई विकसित और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं ने सार्वजनिक क्षेत्र के प्रबंधन में सुधारों पर ध्यान दिया है। फलस्वरूप बहुत से देश सार्वजनिक सेवा प्रदायगी से जुड़े अधिनियमों/नीतियों को प्राथमिकता दे रहे हैं। उदाहरण के तौर पर संयुक्त राज्य अमेरिका का गवर्मेंट परफोर्मेंस एंड रिजल्ट्स एक्ट, 1993, यूके का नागरिक चार्टर, ऑस्ट्रेलिया का पब्लिक सर्विस एक्ट, 1999, तथा मलेशिया का गवर्मेंट ट्रांसफॉर्मेशन प्रोग्राम, 2010। उपरोक्त देशों द्वारा किये गए इन प्रयासों ने पारदर्शी निगरानी और मूल्यांकन का बेहतरीन उदाहरण स्थापित किया है।

लोक सेवाओं की संकल्पना: बदलते मानदंड

सेवाएं जो पूरी तरह या मुख्य रूप से कर या टैक्स द्वारा वित्त पोषित हैं वे सार्वजनिक सेवाएं कहलाती हैं। ऐसी सेवाएं वित्तीय लाभ के लिए नहीं होती हैं और इसे वितरित करने से पहले वस्तुओं या सेवाओं के बदले तत्काल भुगतान की आवश्यकता भी नहीं है। और यदि सार्वजनिक सेवाओं पर शुल्क लगाया भी जाता है, तो आम तौर पर मुनाफे के लिए निर्धारित वाणिज्यिक दरों पर नहीं बेचे जाते हैं (फ्लिन, 1990)। आर्थिक क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा की अनुपस्थिति सार्वजनिक सेवाओं को सामान्य बाजार से अलग करता है| सार्वजनिक सेवाओं में प्रबंधन और प्रावधान की प्रक्रियाएं विभिन्न सिद्धांत जैसे की समान व्यवहार और आवश्यकता के अनुसार संसाधनों का आवंटन एवं निर्णयन पर आधारित है। सार्वजनिक सेवाओं का जन प्रबंधन अक्सर केंद्रीय और स्थानीय सरकार, स्वास्थ्य प्राधिकरण, शिक्षा, रक्षा, न्याय, गृह मामलों और गैर-वाणिज्यिक अर्ध-राज्य (सेमी-स्टेट) संगठन करते हैं (हम्फ्रीज़, 1998, 6-13)। फ्लिन (1990) के अनुसार, कुछ देशों में सार्वजनिक सेवाओं के प्रबंधन का कार्य निजी फर्मों को आउटसोर्स किया जा सकता है, लेकिन इस तरह की डिलीवरी का वित्त पोषण स्रोत कर-आधारित होगा और सार्वजनिक सेवा मानदंडों द्वारा ही शासित रहेगा।

सार्वजनिक और निजी सेवाओं के उद्देश्य में तात्विक अंतर है। सार्वजनिक सेवा के प्रबंधकों को अक्सर आम जनता की जरूरतों को

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

पूरा करना पड़ता है, और साथ ही चुने हुए प्रतिनिधियों के प्रति जवाबदेह होना पड़ता है। जनहित के लिए जनसंचार माध्यम एक महत्वपूर्ण औज़ार होता है। सार्वजनिक सेवाएं कई मायनों में निजी क्षेत्र की सेवाओं से भिन्न होती हैं। निजी क्षेत्र आमतौर पर सेवाओं में निष्पक्षता और समानता के आधार पर काम नहीं करते हैं। निजी क्षेत्र की कंपनियां अपने शेयरधारकों को वित्तीय रिटर्न प्रदान करने के अपने वाणिज्यिक संदर्भ में प्राथमिक दायित्वों के कारण, भौगोलिक या आर्थिक रूप से कम विशेषाधिकार प्राप्त समूहों को अव्यवहार्य सेवाएं प्रदान करने के लिए बाध्य नहीं होती हैं। जब बाहरी ग्राहकों के साथ सेवा संबंधों की बात आती है तो सार्वजनिक और निजी निकायों के बीच बहुत बड़ा अंतर होता है। बाजार उन्मुख निजी क्षेत्र में, सेवा प्रदाता और ग्राहक के बीच संबंध आमतौर पर प्रत्यक्ष और तुलनात्मक रूप से सरल होता है। यदि ग्राहक को दी जाने वाली सेवा प्रतिस्पर्धी मूल्य पर वास्तविक या कथित आवश्यकता को पूरा करती है, तो आमतौर पर इसकी मांग और बिक्री की जाएगी। सार्वजनिक सेवाओं के प्रावधान के संबंध में, प्रदाता-ग्राहक संबंध अक्सर अधिक सूक्ष्म और अप्रत्यक्ष होते हैं। प्रदाताओं के दृष्टिकोण से, भुगतान करने की क्षमता अक्सर मांग का प्रमुख निर्धारक नहीं होती है (हम्फ्रीज़, 1998, 6-13)।

सार्वजनिक क्षेत्र द्वारा सार्वजनिक सेवा प्रदर्शन में निभाई गई भूमिका काफी महत्वपूर्ण है। यदि लोक सेवा अपने नागरिकों की सेवा की ओर उन्मुख है, तो नौकरशाही में लालफीताशाही और भ्रष्टाचार कम होगा और न्यायपालिका न्याय देने में और अधिक कुशल होगी। कुछ विकासशील देशों में ऐसा कोई रुझान नहीं है, जहां नौकरशाह भ्रष्टाचार की वसूली के लिए शक्ति और प्रभाव का प्रयोग करते हैं (हूथर और शाह, 2005, 48)।

वैश्वीकरण के दौर में लोक सेवा प्रदायगी संबंधी प्रावधानों में बदलाव दिखता है। 1980 के बाद जैसे-जैसे वैश्वीकरण का दौर आगे बढ़ा, सार्वजनिक सेवाओं के प्राप्तकर्ता के रूप में नागरिकों में सार्वजनिक सेवा प्रदाताओं के प्रति अपेक्षाओं में भी परिवर्तन देखा गया है। इसके साथ-साथ, नव-उदारवादी आर्थिक रणनीतियों ने सार्वजनिक सेवा प्रदायगी में निजी क्षेत्र की उपयोगिता को बढ़ावा दिया है। हालांकि, कुछ लेखकों का मानना है कि जो लोग निजी क्षेत्र की प्रासंगिकता को सार्वजनिक क्षेत्र की समस्याओं के समाधान के रूप में देखते हैं, वे सार्वजनिक क्षेत्र के लक्ष्यों और सीमाओं के बारे में बहुत कम या कुछ भी नहीं जानते हैं (मरे, 1990, पृ 151)। सार्वजनिक सेवाओं की प्रदायगी में दक्षता, प्रतिस्पर्धी मूल्य निर्धारण और जवाबदेही ने नए सार्वजनिक प्रबंधन और गुणवत्ता प्रबंधन प्रणालियों की शुरूआत का मार्ग प्रशस्त किया है। पब्लिक-प्राइवेट-पार्ट्नर्शिप (पी.पी.पी.) मोडेल के तहत सार्वजनिक सेवाओं की प्रदायगी में सार्वजनिक-निजी-भागीदारी को बढ़ावा दिया गया (मर्फी, 1997, पृष्ठ 2)। भारत में बुनियादी क्षेत्र जैसे कि परिवहन, स्वास्थ्य और शिक्षा से जुड़े सेवाओं में सार्वजनिक-निजी-भागीदारी मॉडल काफी प्रचलित है।

लोक सेवाओं का वर्गीकरण और क्षेत्र विस्तार

सार्वजनिक सेवाओं की एक व्यापक श्रेणी है जो स्थानीय और राष्ट्रीय स्तर पर काम करता है। सार्वजनिक सेवाओं को विभिन्न वर्गों में वर्गीकृत किया गया है। विश्व बैंक इसे पांच श्रेणियों में वर्गीकृत करता है: कम विशेषाधिकार प्राप्त समूहों की सुरक्षा, सामाजिक सेवा और बुनियादी ढांचे में निवेश, नीति पर्यावरण, कानूनी नींव, पर्यावरण की सुरक्षा (फ्रॉस्ट और सुलिवन, 2012, 4)। संयुक्त राष्ट्र ने सरकार के द्वारा कार्य का वर्गीकरण काफी व्यापक पैमाने पर किया हैं। संयुक्त राष्ट्र सरकार के कार्यों को दस श्रेणियों में वर्गीकृत करता है। ये हैं – सामान्य सार्वजनिक सेवाएं, शिक्षा, स्वास्थ्य, सामाजिक सुरक्षा, रक्षा, सार्वजनिक व्यवस्था और सुरक्षा, आर्थिक मामले, पर्यावरण संरक्षण, आवास और सामुदायिक सुविधाएं, मनोरंजन, और संस्कृति और धर्म (यूएनएसडी, 2011)। दूसरी ओर फ्रॉस्ट एंड सुलिवन (2012, 5) ने प्रमुख सार्वजनिक सेवाओं को विभिन्न वर्गों में वर्गीकृत करते हैं; जब इस प्रकार प्रदान की जाने वाली सेवाओं में प्राथमिक से विशिष्ट स्तर तक उन्नयन होता है जो परिवर्तनकारी भूमिका पर आधारित है। इन सेवाओं को उनके द्वारा आठ समूहों में वर्गीकृत किया गया है। उनका मत है कि सार्वजनिक सेवाएं सुरक्षा और विकासोन्मुख दोनों हैं: सार्वजनिक शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा, सामाजिक सुरक्षा, आधारभूत-संरचना, सार्वजनिक यातायात, पर्यावरण सुरक्षा, संस्कृति-क्रीडा व मनोरंजन, और सार्वजनिक सुरक्षा।

लोक सेवा प्रदायगी के बेहतर पहल

जमीनी स्तर पर विभिन्न सर्वेक्षणों से पता चला है कि सार्वजनिक उपयोगकर्ता संतुष्टि के प्रमुख चालकों में लोक सेवा प्रदायगी की गति, जानकारी और उन सेवाओं को प्रदान करने वाले कर्मचारियों की व्यावसायिकता और रवैया शामिल है। फ्रॉस्ट एंड सुलिवन (2012, 8-13) के अनुसार सार्वजनिक सेवा प्रदायगी में त्वरित और केंद्रित परिणाम प्राप्त करने के लिए छह महत्वपूर्ण सिद्धांत हैं: सेवा का सह-निर्माण, स्पष्ट और मापने योग्य परिणाम, पारदर्शी निगरानी और मूल्यांकन, सार्वजनिक कार्यक्रमों की जवाबदेही, सशक्त नीति/कार्यक्रम प्रबंधन, एवं नियामक निकायों के माध्यम से सेवाओं का प्रवर्तन।

नागरिकों के द्वारा प्राप्त की जाने वाली सेवाएं, उसका स्तर, गुणवत्ता और उन सेवाओं तक उनकी पहुंच, जिसके वे हकदार हैं, सूचित किया जाना चाहिए| उन्हें इस बारे में भी सूचित किया जाना चाहिए कि विभाग और प्रांतीय प्रशासन कैसे चलाए जाते हैं, उसका प्रभारी कौन है और लागत कितनी है। स्पष्ट और मापने योग्य परिणामों से सार्वजनिक सेवा की गुणवत्ता और विश्वसनीयता में सुधार का मार्ग प्रशस्त करता है। ग्राहकों की आवश्यकताओं के प्रति लचीलेपन में

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

वृद्धि और अपशिष्ट उन्मूलन के माध्यम से दक्षता के बारे में निरंतर चिंता, प्रयासों के दोहराव को दूर करना, भूमिकाओं और जिम्मेदारियों के ओवरलैप को कम करना भी शामिल है। कई सरकारों ने निगरानी और मूल्यांकन के उपाय, प्रबंधन और सार्वजनिक रिपोर्टिंग शुरू की है| हालांकि हमेशा व्यापक और सुसंगत तरीके से मूल्यांकन नहीं हो पाती है । भारत में सार्वजनिक सेवा प्रदायगी के मूल्यांकन में कुछ उल्लेखनीय पहल किये गए हैं जैसे की सामाजिक लेखा-परीक्षा, इलेक्ट्रॉनिक शासन, शिपमेंट की डिजिटल निगरानी और प्रदर्शन मूल्यांकन, आदि। इसके साथ ही सूचना और संचार प्रौद्योगिकी प्रणालियों के उपयोग में भी धीरे-धीरे प्रसार हो रहा है। जैसे की सार्वजनिक सेवाओं के प्रत्येक लाभार्थी के पास बायोमेट्रिक पहचान के साथ एक पहचान संख्या (विशिष्ट पहचान संख्या/आधार) होगी, ताकि लक्षित नागरिकों द्वारा सेवाओं का लाभ उठाया जा सके। भारत सरकार ने केंद्र प्रायोजित योजनाओं के लिए प्रबंधन सूचना प्रणाली भी शुरू की है।

सार्वजनिक सेवा प्रदायगी के संबंध में सार्वजनिक क्षेत्र के कर्मचारियों को उनके निर्णयों और कार्यों के लिए अधिक जवाबदेह बनाना और जवाबदेही भी तय करना है। इसके तहत प्रबंधकीय जवाबदेही भी शामिल है। भारत में कुछ प्रमुख जवाबदेही संस्थाएं, एजेंसियां और अधिनियम हैं जो जनता में जवाबदेही सुनिश्चित करने के लिए काम करती है जैसे कि सतर्कता आयोग, भारत के नियंत्रक और महालेखा परीक्षक, लोक लेखा समिति, लोकपाल, जनहित याचिका, सूचना का अधिकार, नागरिक चार्टर, आदि। सार्वजनिक क्षेत्र में नीति/कार्यक्रम प्रबंधन नीति निर्माण, विश्लेषण, कार्यान्वयन, निगरानी और मूल्यांकन की प्रक्रिया है। भारत में इसे सचिवालयों और इसके संगठन और प्रबंधन के निकायों (जैसे की कैबिनेट सचिवालय, केंद्रीय सचिवालय, प्रधान मंत्री कार्यालय, आदि), भारत के महान्यायवादी, वित्त आयोग, नीति आयोग आदि के माध्यम से सुनिश्चित किया जाता है। भारत में कैबिनेट सचिवालय के अंतर्गत निष्पादन प्रबंधन प्रभाग आता है जो सरकारी एजेंसियों के नियमित निष्पादन-मूल्यांकन के अनुसार निर्धारित लक्ष्यों और मापने योग्य परिणामों को सुनिश्चित करता है। भारत में कई सलाहकार और नियामक निकाय हैं जिसे कार्यान्वयन की जिम्मेदारी सौंपी गई है| शिक्षा क्षेत्र में गुणवत्ता नियंत्रण और निगरानी का काम सार्वजनिक संस्थाएं जैसे की विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, केंद्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद और अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद करती है। स्वास्थ्य और पर्यावरण क्षेत्रों में ऐसी जिम्मेदारियों का निर्वहन भारतीय चिकित्सा परिषद, भारतीय खाद्य सुरक्षा और मानक प्राधिकरण, राष्ट्रीय औषधि मूल्य निर्धारण प्राधिकरण, सामान्य समीक्षा मिशन, राष्ट्रीय हरित न्यायाधिकरण और केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड जैसी संस्थाएं करते हैं। भारतीय दूरसंचार नियामक प्राधिकरण और प्रसार भारती जन संचार के क्षेत्र में प्रमुख नियामक संस्थाएं हैं। उसी तरह बार काउंसिल ऑफ इंडिया कानूनी क्षेत्र में नियामक एजेंसी का काम करती है। बिजली के क्षेत्र में अपीलीय न्यायाधिकरण और केंद्रीय विद्युत नियामक आयोग है। जीवन यापन एवं बीमा-सुरक्षा क्षेत्र में भारतीय बीमा नियामक और विकास प्राधिकरण और पेंशन फंड नियामक और विकास प्राधिकरण हैं।

भारत में लोक सेवा प्रदायगी

स्वतंत्रता के बाद भारत में नागरिकों के जीवन में राज्य की महत्ता रही है क्योंकि, यह लोगों के मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए लोक-वित्त आवंटित करती रही है। भारी-अनुदान वाले सार्वजनिक नीतियों के प्रवर्तन का उद्देश्य आजीविका सुनिश्चित करना, स्वास्थ्य और शिक्षा के साथ भुखमरी-मुक्त भारत के सपने को साकार करने हेतु बुनियादी और आवश्यक सेवाओं को लोगों तक पहुँचाना रहा है। हालाँकि भारत में एक नीतिगत दुविधा भी रही है| यह नीतिगत दुविधा एक ओर आवश्यक सेवाओं के सार्वभौमिक प्रावधानों बनाम लक्षित सेवाओं और दूसरी ओर सार्वजनिक सेवाओं की प्रभावकारिता और आर्थिक विकास के बीच रही है। स्कूली शिक्षा, प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल, मध्याह्न भोजन, बिजली कनेक्शन, राशन कार्ड और पीने के पानी जैसी सुविधाएं 'लक्षित' होने के बजाय सभी को गैर-भेदभावपूर्ण आधार पर प्रभावी ढंग से उपलब्ध कराई जानी चाहिए। वे इस बात पर जोर देते हैं कि तमिलनाडु, केरल और हिमाचल प्रदेश जैसे राज्य नीतियों के द्वारा सार्वभौमिक रूप से कुछ सर्वोत्तम सार्वजनिक सेवाएं प्रदान करने में सफल रहे हैं (सेन और द्रेज, 2013)।

वर्तमान में इच्छित लाभार्थियों को सीधे नकद हस्तांतरण और सब्सिडी के प्रश्न को लेकर एक नीतिगत बहस चल रही है। अमर्त्य सेन अच्छी सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा और सार्वजनिक शिक्षा पर जोर देते हैं, लेकिन वह शिक्षा और स्वास्थ्य सेवा पर सार्वजनिक खर्च को सब्सिडी के बराबर नहीं मानते हैं। सेन का कहना है कि नकद हस्तांतरण की प्रणाली कुछ विशिष्ट मामलों में काफी अच्छी तरह से काम करती है। जैसे की अकाल राहत के लिए नकद हस्तांतरण बहुत जल्दी निराश्रित लोगों की भोजन खरीदने की क्षमता का पुनर्निर्माण कर सकता है, और खाद्य बाजार तेजी से विकसित हो सकता है (सेन, 2015)।

ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में सार्वजनिक सेवा प्रदायगी आवश्यक है। सेवाओं की आवश्यकता परिस्थितियों और मांग की प्रकृति के अनुसार भिन्न हो सकती है।सार्वजनिक सेवाओं की मांग ग्रामीण क्षेत्रों में भोजन, स्वास्थ्य, स्वच्छता, शिक्षा, बिजली, रोजगार, बैंकिंग सेवाओं के विस्तार, कृषि-आधारित सब्सिडी पर अधिक केंद्रित है। बुनियादी सेवाओं का समान वितरण शहरी क्षेत्रों की प्रमुख मांगों में शामिल हैं। ऐसी सेवाओं का मक़सद महानगरों और गैर-महानगरों के बीच के अंतर को कम करना जैसे की जल सुविधा, खाद्य सुरक्षा, आजीविका, बुनियादी ढांचे, भूमि और आवास, परिवहन, बिजली, स्वास्थ्य सुविधा, आदि। इन मांगों के जवाब में कई योजनाएं जैसे कि पब्लिक डिस्ट्रब्यूशन सिस्टम (पीडीएस), नैशनल रुरल हेल्थ मिशन

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

(एनआरएचएम), नैशनल अर्बन हेल्थ मिशन (एनयूएचएम), महात्मा गांधी नैशनल रुरल एमप्लॉयमेंट गारंटी ऐक्ट (मनरेगा), सर्व शिक्षा अभियान (एसएसए) और प्रधान मंत्री जन-धन योजना (पीएमजेडीवाई), आदि शुरू किया गया है।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली: खाद्य सुरक्षा

केंद्र सरकार ने 1965 में सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पीडीएस) की शुरुआत गरीबों को रियायती दरों पर भोजन उपलब्ध कराने के लिए किया था। सब्सिडी वाली खाद्यान्न योजना सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पीडीएस) को 1997 में बदल कर लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली (टीपीडीएस) कर दिया गया। गरीबी रेखा से नीचे (बीपीएल) और अंत्योदय अन्न योजना के दायरे में आने वाले परिवारों को टीपीडीएस के तहत प्रति परिवार 35 किलोग्राम प्रति माह की दर से रियायती खाद्यान्न मिलता है।

1997 में शुरू हुई टीपीडीएस के तहत गरीबी रेखा से ऊपर (एपीएल) या बीपीएल या अंत्योदय कार्ड के लिए सूचीबद्ध परिवारों को खाद्यान्न, दाल और खाद्य तेल प्रदान किया जाता है। अंत्योदय कार्ड धारकों (अति-गरीब लोगों के लिए) को बिलों बीपीएल परिवारों की तुलना में अधिक सब्सिडी मिलती है। एपीएल परिवारों को 2001 में पीडीएस से प्रभावी रूप से बाहर रखा गया जब केंद्र सरकार ने एपीएल इश्यू मूल्य बाजार मूल्य से ऊपर रखा था। कई राज्यों में हाल के वर्षों में उन्होंने धीरे-धीरे सिस्टम में फिर से प्रवेश किया, क्योंकि बाजार की कीमतों में बढ़ोतरी हुई, जबकि पीडीएस जारी करने की कीमत अपरिवर्तित रही।

2011 में नौ राज्यों का एक निजी शोध-सर्वेक्षण किया गया, जिसका मक़सद सार्वजनिक वितरण प्रणाली के पोषण प्रभाव, पिछले एक दशक में नीतिगत बदलाव (विशेषकर राज्य स्तर पर) और इसकी भूमिका समझना था। इस सर्वेक्षण में राज्यों की पीडीएस प्रदर्शन रैंकिंग आठ मापदंडों के आधार पर की गई थी – समावेश की डिग्री, सिस्टम की अखंडता (खरीद-पात्रता अनुपात / पीडीएस अनाज की गुणवत्ता के संदर्भ में मूल्यांकन), भौतिक पहुंच (दूरी और समय) , पूर्वानुमेयता (उचित मूल्य की दुकान / एफपीएस खोलने के दिन), विश्वसनीयता (क्या खुलने के दिन पर्याप्त हैं), रिकॉर्ड-कीपिंग (राशन कार्ड और बिक्री और स्टॉक रजिस्टर का रखरखाव) और संस्थागत व्यवस्था (डोर-स्टेप डिलीवरी एवं फेयर प्राइस शॉप की उपलब्धता)। इन मापदंडों के अनुसार हिमाचल प्रदेश को चार्ट में सबसे ऊपर और बिहार को सबसे नीचे रखा गया। हिमाचल प्रदेश, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश और छत्तीसगढ़ जैसे राज्य पीडीएस के कामकाज से संबंधित नवीन शासन शैलियों की अपनी विशिष्टता के कारण कई मायनों में अद्वितीय हैं (खेड़ा 2011, 47-48)।

हिमाचल प्रदेश का मॉडल एक विशेष रुचि पैदा करता है क्योंकि यह एक समान पीडीएस के बजाय सार्वभौमिकता के सिद्धांत पर आधारित है। बीपीएल परिवारों को रियायती दर पर पीडीएस अनाज दिया जाता है। हिमाचल प्रदेश ने अन्य राज्यों से अलग यह सुनिश्चित किया है कि एपीएल परिवारों को भी अनाज़ उपलब्ध कराया जाए। गौरतलब है कि गैर-अनाज पीडीएस वस्तुएं (दाल और खाद्य तेल) सभी घरों को समान मात्रा में दी जाती हैं। हिमाचल प्रदेश मॉडल भी दो मामलों में विशिष्ट है। पहला खाद्य तेल और दालों की अधिक आपूर्ति के मामले में जो घरेलू आकार से जुड़ा होता है। दूसरा हिमाचल प्रदेश की उपलब्धियों को इसके कठिन भूभाग के आलोक में भी देखा जाना चाहिए (खेड़ा 2011, 48)। न्यूनतम लागत प्रौद्योगिकी के आधार पर तमिलनाडु ने पारदर्शिता और जवाबदेही बढ़ाने के लिए निगरानी प्रणाली स्थापित की है। छत्तीसगढ़ में भी सार्वजनिक वितरण प्रणाली को कुशलतापूर्वक संचालित किया गया है। इस दिशा में छत्तीसगढ़ द्वारा कुछ दूरगामी पहल जैसे की पीडीएस कवरेज का विस्तार और कीमतों को कम करना, कम्प्यूटरीकरण, दरवाजे पर अनाज की डिलीवरी, राशन की दुकानों का निजीकरण (पंचायतों और स्वयं सहायता समूहों द्वारा राशन की दुकानों को चलाया जाना) शामिल हैं। इसके साथ ही सही चैनल स्थापित करके शिकायत निवारण के लिए उचित कदम उठाना भी शामिल है (खेड़ा 2011, 48)। छत्तीसगढ़ ने जन जागरूकता अभियान, नागरिकों की भागीदारी, राशन कार्डों के डिजिटलीकरण और एक एसएमएस अलर्ट के इस्तेमाल से पीडीएस में सुधार किया है (पुरी, 2012: 21-23)।

जन वितरण प्रणाली (पीडीएस): कार्यान्वयन और चुनौतियां

पीडीएस की खराब कार्यप्रणाली खाद्य और पोषण सुरक्षा के इच्छित उद्देश्यों पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं। यहां तक कि लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली (टीपीडीएस) भी एक बड़ी आबादी तक सीमित पहुँच ही बना सकी है। इसके अतिरिक्त टीपीडीएस में भी भ्रष्टाचार की प्रवृत्ति का प्रसार हुआ है। पीडीएस की कुछ प्रमुख शासन चुनौतियों में मैनुअल रिकॉर्ड कीपिंग, स्टॉक प्रबंधन, खराब पात्रता और खरीद अनुपात, दालों और खाद्य तेलों का गैर-सार्वभौमिकीकरण, खाद्यान्न की खराब गुणवत्ता और स्टॉक की कम उपलब्धता है। इस तथ्य के बावजूद कि कुछ राज्य जैसे हिमाचल प्रदेश, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश और छत्तीसगढ़ अच्छा प्रदर्शन कर रहे हैं वहीं यूपी, बिहार और झारखंड पीडीएस के चुनौतियों से जूझ रहे हैं। बिहार, झारखंड और उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में बीपीएल सूचियों में भिन्नता और बहिष्करण संबंधित त्रुटियां देखी गई हैं। बीपीएल कार्डों पर केंद्र द्वारा लगाए गए सीमा और राशन कार्ड जारी करने की मौजूदा प्रणाली कठोर है। 2013 में छत्तीसगढ़ सरकार द्वारा किए गए केंद्रीकृत ऑनलाइन रीयल-टाइम इलेक्ट्रॉनिक पीडीएस (कोर पीडीएस), सुधार सफल और उपयोगी लेकिन सीमित रहा है। कोर पीडीएस दुकान मालिकों और कार्डधारकों के बीच शक्ति असंतुलन के मुद्दों को संबोधित नहीं कर पाया है (जोशी, सिन्हा और पटनायक, 2016, 51-59)।

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (मनरेगा)

बहुत संघर्ष के बाद 2005 में ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार गारंटी सुनिश्चित करने और ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों में प्रवास को रोकने के लिए महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (मनरेगा),2005 बनाया गया। इस अधिनियम के अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्रों में प्रत्येक घर से वयस्क को प्रति वर्ष 100 दिनों के रोजगार का प्रावधान किया गया । रोजगार के इच्छुक व्यक्ति को पंचायत में पंजीकरण कराना होता है और पंजीकरण के 14 दिनों के भीतर उसे रोजगार प्रदान किया जाएगा। निर्धारित अवधि के भीतर यदि पंजीकृत व्यक्ति को रोजगार उपलब्ध नहीं कराया जाता है, तो उसे बेरोजगारी भत्ता दिया जाएगा।

शहरों की ओर प्रवासन को प्रभावी ढंग से कम करने में मनरेगा सफल रहा है (हक, 2001: पीपी.445-71)। आंध्र प्रदेश अन्य राज्य सरकारों के लिए मनरेगा के प्रभावी कार्यान्वयन के मामले में एक उल्लेखनीय रोल मॉडल साबित हुआ है। 2009 में आंध्र प्रदेश सरकार ने सोसाइटी फॉर सोशल ऑडिट्स एकाउंटेबिलिटी एंड ट्रांसपेरेंसी की स्थापना की जो नियमित आधार पर श्रमिकों का पंजीकरण और भुगतान के संबंध में विस्तृत और व्यापक सामाजिक ऑडिट आयोजित करता है। राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (एनआरएलएम) जिसे आजीविका, 2011 के रूप में भी जाना जाता है उसने कौशल सृजन और प्रशिक्षण के बाद की नौकरी में एक नए युग की शुरुआत की है। ग्रामीण गरीबी के मुद्दे को संसाधनों और अवसरों की उपलब्धता के संदर्भ में सुरक्षात्मक और नीतिगत उपायों द्वारा हल किया जा रहा है।

गरीबों को कौशल-युक्त शिक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से ऐसी सार्वजनिक नीतियों की आवश्यकता है। कौशल विकास और उद्यमिता के समान अवसर संरचनाओं के निर्माण के इस उद्देश्य से राष्ट्रीय नीति, 2015 लागू की गई ताकि वैश्वीकृत दुनिया में 21वीं सदी का भारत युवा आबादी के क्षमता का लाभ उठा सके। मनरेगा के एक दशक से अधिक के कार्यान्वयन अनुभव ने इसके घोषित उद्देश्यों की प्राप्ति के संदर्भ में कुछ महत्वपूर्ण चुनौतियों को उजागर किया है।

मनरेगा: कार्यान्वयन और चुनौतियाँ

मनरेगा के लक्षित उद्देश्यों की प्राप्ति के समक्ष काम की कमी, बजट कैप, वेतन भुगतान में देरी और श्रमिकों के अधिकारों, आदि से संबंधित कार्यान्वयन की चुनौतियाँ उभरी हैं। मनरेगा के उद्देश्यों की प्राप्ति में गिरावट के लिए निम्नलिखित कारण जिम्मेदार हैं – मजबूत शिकायत निवारण प्रणाली का अभाव, कमजोर वित्तीय संस्थान, पदाधिकारियों की भारी कमी और प्रौद्योगिकी के उपयोग में वृद्धि। लेकिन राज्य सरकारें और नागरिक समाज ने हाल के दिनों में कुछ पहल किए हैं जो इस योजना के कार्यान्वयन में सुधार के लिए नए अवसर खोलेंगे (अग्रवाल, 2016, 38)।

मनरेगा प्रदत्त रोजगार में पिछले पांच वर्षों में गिरावट देखी गई है। 2014-2015 में मनरेगा ने 155 करोड़ व्यक्ति-कार्य दिवस की शुरुआत कि जो 2009-10 में उत्पन्न रोजगार से लगभग आधा है। आंध्र प्रदेश और छत्तीसगढ़ में रोजगार में 2012-13 और 2014-15 के बीच आधे से अधिक की कमी आई है और इसी दौरान बिहार में रोजगार में लगभग 60 प्रतिशत की कमी देखी गई है। मजदूरी भुगतान में देरी भी मानरेगा में एक बड़ी चुनौती रही है। 2014-15 में 70 प्रतिशत मामलों में मनरेगा मजदूरी का देर से भुगतान किया गया था| विलंबित राशि का लगभग 64 प्रतिशत भुगतान करने में एक महीने से अधिक का समय लगा। पंजाब और पश्चिम बंगाल में विलंबित भुगतानों का अनुपात 90 प्रतिशत से अधिक था (अग्रवाल, 2016, 38)।

कार्यस्थल पर सुविधाएं जैसे की पीने का पानी, प्राथमिक चिकित्सा किट, आराम के लिए छाया, छह साल से कम उम्र के बच्चों के लिए क्रेच और नोटिस बोर्ड आदि की व्ययस्थ का अभाव पाया गया है| यहाँ तक कि शिकायत निवारण के प्रयास का भी अभाव देखा गया है। श्रमिकों और विशेष रूप से महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने के लिए इन बुनियादी सुविधाओं में सुधार करने की आवश्यकता है। जिन श्रमिकों को काम से वंचित किया जाता है उनके लिए मानरेगा में बेरोजगारी भत्ते का प्रावधान किया गया है परंतु पंजीकृत श्रमिकों को इस सुविधा का लाभ मिलता कम ही देखा गया है। न्यूनतम मुआवजा राशि के वेतन भुगतान में भी देरी हो रही है(अग्रवाल, 2016, 38-39)। ग्रामीण महिलाओं का मनरेगा प्रदत्त रोजगार में अल्प समावेशन हुआ है। मनरेगा के तहत मुख्य रूप से आकस्मिक या मैनुअल प्रकृति का काम है, जो निर्माण, कृषि और संबद्ध क्षेत्रों में केंद्रित है। गैर-मैनुअल-महिला कार्यबल को समायोजित करने के लिए संस्थागत नयापन की कमी है। मनरेगा के तहत शिक्षित महिलाओं के लिए रोजगार उपलब्ध नहीं कराया जा रहा है। इसके अलावा मनरेगा में विधवाओं, युवा माताओं, छोटे बच्चों की माताओं और बिना वयस्क-पुरुष सदस्य वाले परिवारों आदि जैसे महिला कार्यबल के लिए रोजगार उपलब्धता की चुनौतियाँ बनी रही है। अखिल भारतीय स्तर पर 2006-2010 के दौरान मनरेगा में सृजित कुल कार्य दिवसों में महिलाओं की औसत हिस्सेदारी 45 व्यक्ति-दिवस थी। यह आंकड़ा 2010-2012 के दौरान बढ़कर 48 व्यक्ति-दिवस हो गया। तमिलनाडु, केरल और राजस्थान जैसे राज्यों में 2006-2010 के दौरान कुल व्यक्तियों में महिलाओं की औसत हिस्सेदारी कहीं बेहतर है। हालांकि इसी अवधि के दौरान जम्मू और कश्मीर, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल ने इस मामले में खराब प्रदर्शन किया। केरल ने 2010-2012 के दौरान इस संबंध में महिलाओं की भागीदारी के लिए 90 व्यक्ति-दिवसों के साथ शीर्ष स्थान हासिल किया जबकि तमिलनाडु महिलाओं के लिए 80 व्यक्ति-दिवसों के साथ दूसरे स्थान पर रहा और राजस्थान ने 68 व्यक्ति-दिवसों के साथ तीसरा स्थान दर्ज किया। हिमाचल प्रदेश ने विशेष रूप से 2006-2010 के दौरान महिलाओं के लिए 32 व्यक्ति-दिवस सृजित

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

किया था जो 2010-2012 के दौरान बढ़कर 51 व्यक्ति-दिवसों तक पहुँच गया (नारायणन और दास, 2014, 49)।

मनरेगा न्यूनतम मजदूरी अधिनियम से जुड़ा नहीं है। इसलिए कई राज्यों में मनरेगा की मजदूरी राज्य के न्यूनतम कृषि मजदूरी से कम है। इस परिपेक्ष्य में मनरेगा स्थायी आजीविका के लिए अंतिम समाधान नहीं हो सकता है क्योंकि इस योजना के तहत मजदूरी की दर श्रम बाजार की तुलना में काफी कम है। मौजूदा पदाधिकारियों पर कर्मचारियों की कमी से बिना किसी अतिरिक्त प्रोत्साहन के काम का बोझ बढ़ जाता है और इससे कार्यक्रम के निष्पादन में देरी होती है। उनके प्रदर्शन में सुधार के लिए वित्तीय प्रोत्साहन का अभाव है और उनके बेहतर कार्य निष्पादन के लिए सार्वजनिक प्रशंसा का भी अभाव है (अग्रवाल, 2016: 38-40)। मनरेगा में भ्रष्टाचार के मामले भी उजागर होते रहे हैं। मजदूरी भुगतान संबंधित मस्टर रोल में झूठी प्रविष्टि को भ्रष्टाचार का माध्यम बनाया जाता रहा है। कई राज्यों में मनरेगा के लिए शिकायत निवारण प्रणाली मजबूत नहीं है। अधिकांश श्रमिक शिकायत करने के अधिकार के प्रति जागरूक नहीं हैं। जो लोग सरकारी अधिकारी या पदाधिकारी से शिकायत करते हैं उनके शिकायत का निवारण भी कम ही किया जाता है। ऐसी स्थितियां स्थानीय अधिकारियों और मनरेगा के पदाधिकारियों की जवाबदेही की कमी की संस्कृति के कारण बनी रहती हैं। बिना किसी दण्ड के डर के कारण श्रमिकों के अधिकारों का बड़े पैमाने पर अवमानना हो रहा है।

निष्कर्ष

इस शोध आलेख में यह तथ्य स्पष्ट तौर पर उभरता है कि सार्वजनिक वितरण प्रणाली और मनरेगा के कार्यान्वयन में हिमाचल प्रदेश, तमिल नाडु, आंध्र प्रदेश, छतीसगढ़, गुजरात, राजस्थान जैसे बेहतर प्रदर्शन करने बाले राज्य हैं जहां राज्य शासन वयबस्था द्वारा नागरिक समाज और समुदाय के साझेदारी और नवीन प्राद्यौगिकी की मदद से लोक सेवा प्रदायगी में गुणवत्ता, पारदर्शिता और जबावदेही सुनिश्चित करने का सफल प्रयास किया गया है 1 इन योजनाओं के कार्यान्वयन में बिहार, झारखंड, मध्य प्रदेश, पश्चिम बंगाल जैसे राज्य हैं जिनका प्रदर्शन खराब रहा है क्योंकि इन राज्यों में इन योजनाओं से संबंधित एक नए भ्रष्टाचार की संस्कृति का प्रसार हुआ है और यहाँ लोक सेवा प्रदायगी में पारदर्शिता और जबावदेही का अभाव है 1

बिभिन्न राज्यों के पहाड़ी और पठारी क्षेत्रों के लिए जन वितरण प्रणाली के हिमाचल प्रदेश और छत्तीसगढ़ के बेहतर कार्यान्वयन अनुभवों का लाभ उठाया जा सकता है 1 खराब प्रदर्शन बाले अन्य राज्यों को तमिल नाडु और आंध्र प्रदेश के स्वीकार्य बेहतर अनुभवों से लाभ उठाने की आवश्यकता है 1 नीतिगत स्तर पर, नई आजीविका सृजन नीति के माध्यम से मनरेगा के दायरे को विस्तार करने की आवश्यकता है। शिक्षित ग्रामीण महिलाओं के रोजगार समायोजन के लिए मनरेगा में नीतिगत संशोधन किये जाने की आवश्यकता है।

फ्रंटलाइन सेवा प्रदाताओं के प्रशिक्षण के माध्यम से क्षमता निर्माण, बेहतर प्रदर्शन और जवाबदेही के लिए आकर्षक सुविधाएं और प्रोत्साहन से बेहतर सेवा प्रदयगी सुनिश्चित किया जा सकता है और इन सार्वजनिक सेवाओं को भ्रष्टाचार मुक्त भी किया जा सकता है। मौद्रिक और गैर-मौद्रिक पुरस्कारों के माध्यम से अधिकारियों और सेवा-लाभार्थी के सहयोग से सार्वजनिक सेवा के प्रदर्शन को बेहतर किया जा सकता है। सार्वजनिक सेवाओं की गुणवत्ता की निगरानी और राज्य की क्षमता विस्तार एवं उसे अधिक प्रभावी बनाने के लिए वितरण प्रक्रिया में बिचौलियों की भूमिका को कम करने की आवश्यकता है।

संदर्भ

1. दासगुप्ता, पार्थ और देबराज रे, (1986), इनइक्वलिटी एज़ अ डिटरमिनेंट ऑफ़ मालन्यूट्रिसन एंड अनएम्प्लॉयमेंट: थ्योरी', द *इकोनॉमिक जर्नल*, 96(384), पृष्ठ 1011-1034.
2. डीटन, एंगस और जीन ड्रेज, (2002), 'पोवर्टी एंड इनइक्वलिटी इन इंडिया: अ रि-एग्जामिनेशन, *इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली*, 37(36), 7 सितंबर, पृष्ठ 3729-3748.
3. ड्रेज़, जीन और अमर्त्य सेन, (2013), *एन अनसर्टेन ग्लोरी: इंडिया एंड इट्स कॉन्ट्राडिक्शन्स*, प्रिंसटन, एनजे: प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस।
4. हम्फ्रीज़, पीटर सी., (1998), *इम्प्रूविंग पब्लिक सर्विस डिलीवरी,* डबलिन: इंस्टिट्यूट ऑफ़ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन।
5. फ्लिन, एन., (1990), *पब्लिक सेक्टर मैनेजमेंट*, लंदन: हार्वेस्टर एंड व्हीटशेफ।
6. हूथर, जेफ और अनवर शाह, (2005), अ सिंपल मेजर ऑफ गुड गवर्नेंस, अनवर शाह (सं.), *पब्लिक सर्विसेज डिलीवरी*, वाशिंगटन, डी.सी.: द वर्ल्ड बैंक।
7. मरे, सीएच, (1990), *दी सिविल सर्विस ऑब्ज्वर्ड*, डबलिन: इंस्टीट्यूट ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन।
8. मर्फी, के. (1997), ऑफिस ऑफ़ द ओम्बड्समैन: स्टेटमेंट ऑफ़ स्ट्रेटेजी 1997-1999, डबलिन: इंस्टिट्यूट ऑफ़ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन।
9. सेन, ए., (2015), द अमर्त्य सेन इंटरव्यू: द फेलियर ऑफ़ द स्टेट इज कंटीन्यूइंग इन इंडिया (इन इंटरव्यू विथ इन्द्राणी बासु, *हुफ्पोस्ट*, (ऑनलाइन न्यूज़ पोर्टल) <https://www.huffpost.com/archive/in/entry/amartya-sen-interview_n_6720062?utm_hp_ref=in-amartya-sen-india-politics> से 25 सितंबर 2016 को एक्सेस किया गया।
10. जोशी, अनुराधा, दीपा सिन्हा और बिराज पटनायक, (2016), 'क्रेडिबिलिटी एंड पोर्टेबिलिटी? लेसन्स फ्रॉम कोर पीडीएस रिफॉर्म्स इन छत्तीसगढ़, *इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली*, 51(37), 10 सितंबर, पृष्ठ 51-59।
11. अग्रवाल, अंकिता, (2016), 'दि मनरेगा क्राइसिस: इनसाइट्स फ्रॉम झारखंड', *इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली*, 51(22), 28 मई, पृष्ठ 39-43।
12. नारायणन, सुधा और यू. दास, (2014), वीमेन पार्टिसिपेशन एंड राशनिंग इन द एम्प्लॉयमेंट गारंटी स्कीम, *इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली*, 49(46), 15 नवम्बर,, पृष्ठ 47-53।

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

13. फ्रॉस्ट और सुलिवन, (2012), पब्लिक सर्विस डिलिवरी – गेट-राइट्स, चैलेंजेज एंड सक्सेसेस, < https://www.frost.com/upld/get-data.do?id=1723470> से 8 नवम्बर 2015 को एक्सेस किया गया।
14. यूएनएसडी, (2011), क्लासिफिकेशन ऑफ़ द फंक्शनस ऑफ़ गवर्नमेंट, अगस्त 23, < htptps://unstats.un.org/> से 8 नवम्बर 2015 को एक्सेस किया गया।
15. बुचर, टी., (1997), द सिटीजन्स चार्टर: क्रिएटिंग अ कस्टमर ओरिएंटेड सिविल सर्विसेस, पी. बार्बेरिस (सं) द *सिविल सर्विस इन एन एरा ऑफ़* चेंज, एल्डरशॉट: डार्टमाउथ.
16. आईडीएफसी रूरल डेवलपमेंट नेटवर्क, (2013), इंडिया रूरल डेवलपमेंट रिपोर्ट: 2012-13, न्यू डेल्ही, ओरिएंट ब्लैकस्वान.
17. खेरा, रीतिका, (2011), रिवाइवल ऑफ़ द पब्लिक डिस्ट्रीब्यूशन सिस्टम: एविडेंस एंड एक्सप्लानेशनस, *इकोनोमिक एंड पोलिटिकल वीकली,* 46(44-45), पृष्ठ 36-50.
18. पुरी, आर., (2012), रेफोर्मिंग द पी.डी.एस.: लेसंस फ्रॉम छत्तीसगढ़, *इकोनोमिक एंड पोलिटिकल वीकली,* 47(5), पृष्ठ 21-23.
19. यूनाइटेड नेशन्स पापुलेशन डिवीज़न, (2014), *पापुलेशन एंड डेवलपमेंट डाटाबेस, 2014,* <https://www.un.org/en/development/desa/population/publications/development/population-development-database-2014.asp> से 15 जनवरी 2016 को एक्सेस किया गया।

© RRIJM 2015, All Rights Reserved